ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(10): 54-55
www.allresearchjournal.com
Received: 15-08-2019
Accepted: 18-09-2019

डॉ. राकेश गुप्ता
एसोसियेट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, नेशनल (पी0जी0) कॉलेज, भोगाँव, मैनपुरी, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ. राकेश गुप्ता
एसोसियेट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, नेशनल (पी0जी0) कॉलेज, भोगाँव, मैनपुरी, उत्तर प्रदेश, भारत

कुमायूँ के ग्रामों में उत्पादन व्यवस्था एवं आर्थिक परिवर्तन

डॉ. राकेश गुप्ता

DOI: https://doi.org/10.22271/allresearch.2019.v5.i10a.10225

सारांश
कुमायूँ अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण देश के अन्य मैदानी भागों से भिन्न है। नालीदार खेत ऊपर से नीचे की ओर बने होते हैं और बरसात में ऊपर के खेतों से बहकर खाद एवं उपजाऊ तत्व नीचे वाले खेतों में आ जाता है, परिणामस्वरूप ऊपर के खेतों में फसल कम होती है। सिचाई के लिये पूर्णरूप से वर्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। उद्योग ज्यादातर तराई के क्षेत्र में ही है। आवागमन के साधन बहुत अच्छे नहीं हैं। पहाड़ों के दरकने से कई बार सड़कों का आवागमन बाधित होता है। फलों को बाहर भेजने में कठिनाई होती है इसलिये फलों की अच्छी कीमत नहीं मिल पाती जिससे आर्थिक लाभ नहीं मिल पाता। आवागमन के अच्छे साधन एवं कृषि की नयी एवं उन्नत तकनीकियों को विकसित करके कुमायूँ के ग्रामीण क्षेत्रों को भी आर्थिक रूप से सम्पन्न किया जा सकता है।

कुटशब्दः कुमायूँ, ग्रामीण, कृषक, प्रविधियों, भूमिहीन

प्रस्तावना
भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधारस्तम्भ कृषि है। भारत एशिया के उन विकासशील देशों में आता है, जो नियोजन और विकास कार्यक्रमों के माध्यम से चतुर्मुखी प्रगति की ओर बढ़ रहे हैं। स्मिथ का कथन है कि ''कृषि एवं सामूहिक उपक्रम ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आधार हैं'' इस दृष्टिकोण से कृषक तथा ग्रामीण शब्द एक–दूसरे के समान हैं।[1] स्पष्ट है कि ग्रामीण अपनी भूमि से भावनात्मक रूप जुड़े रहते हैं तथा उनकी आर्थिक व सामाजिक स्थिति का निर्धारण भी बहुत सीमा तक उनके भू–भाग के आधार पर ही होता है। जो कृषक बड़ी भूमि के स्वामी हैं उनकी स्थिति छोटे भूमि के स्वामियों की तुलना में ऊँची होती है। साथ ही साथ जिन गाँवों में परम्परागत प्रविधियों द्वारा कृषि की जाती है उनकी तुलना में ऐसे गाँवों को अधिक ऊँची स्थिति प्राप्त हो गयी है जिनमें कृषि कार्य वैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा किया जाने लगा है। आज एक ऐसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था विकसित हो रही है, जो मूल रूप से कृषि की नवीन प्रविधियो तथा प्रौद्योगिक ज्ञान पर आधारित है।

भारत में कृषि के क्षेत्र में हरित क्रान्ति लाने का प्रयत्न किया गया है। साथ ही स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भूमि सुधारों के द्वारा किराये पर भूमि जोतने वालो, बटाईदारों में खेती करने वालों तथा भूमिहीन श्रमिकों की स्थिति सुधारने का प्रयत्न भी किया गया है। कृषि के क्षेत्र में यन्त्रीकरण भी हुआ है। ग्रामीण किसान ट्रैक्टर, पम्पिंग सेट तथा अन्य कृषि उपकरणों का भी प्रयोग करने लगे हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कृषि क्षेत्र में नवीन किस्मों के बीजों, रासायनिक खादों, नवीन कृषि प्रविधियों तथा सिंचाई की सुविधाओं आदि के उपलब्ध होने से कृषि उत्पादन बढ़ा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों में से अधिकांश किसी न किसी रूप में खेती से सम्बन्धित कोई न कोई कार्य करते हैं। कुछ लोग किराये पर भूमि लेकर जोतते हैं तो कुछ बटाईदारी के रूप में कृषि कार्य करते हैं। कुछ ऐसे भू–स्वामी भी पाये जाते हैं जो स्वयं हाथ से कार्य नहीं करते परन्तु अन्य लोगों द्वारा किये जाने वाले कृषि कार्यों की देखरेख करते हैं। बड़े भूस्वामी यद्यपि भुमि सुधार कानून बन जाने से बहुत कम हो गये हैं, परन्तु पूरी तरह अभी भी अस्तित्वहीन नहीं हैं। वे भूमिहीन श्रमिकों की सहायता से खेती का कार्य करते हैं। कुमायूँ के ग्रामीण तराई क्षेत्रों में इस प्रकार के भूस्वामी अपना अस्तित्व रखते हैं। पूरे ग्रामीण कुमायूँ के क्षेत्र में हाथ से किये जाने वाले कृषि कार्यों में एक संस्तरण है। सबसे अधिक परिश्रम साध्य कार्य निम्नतम जातियों अथवा निम्न स्तर के लोगों एवं स्त्रियों को करने पड़ते हैं।

आन्द्रेबिते ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया है कि साधारणतः देखने में यह आता है कि कठोर एवं सर्वाधिक परिश्रम साध्य कार्य उन्हें सौंपे जाते हैं जो भूमिहीन हैं और स्तरीकरण के निम्नतर स्तर पर हैं।

बड़े भूस्वामी स्वयं कार्य नहीं करते क्योंकि वे दूसरों से अपने लिये कार्य कराने में साधनों की सम्पन्नता के कारण समर्थ हैं।[2] ग्रामीण को अपनी भूमि व पशुओं से भारी लगाव होता है। कठिनाई के समय यदि कृषक को अपना खेत या गाय या बैल बेचने पड़े तो वह दिन उसके परिवार के लिये सर्वाधिक शोक का दिन होता है। किसान इस कार्य को बहुत भारी मन से करता है। भारतीय कृषक भूमि को अपनी माँ के समकक्ष मानते हैं और भूमि को छोड़ना उनके लिये ठीक वैसा ही है जैसाकि अपनी माँ से बिछुड़ना[3] डॉ0 श्यामाचरण दुबे का उपर्युक्त कथन कृषि तथा ग्रामीण व्यक्ति के सम्बन्ध को स्पष्ट करता है। ग्रामीण जीवन मुख्य रूप से कृषि पर ही निर्भर है इसलिये भूमि की व्यवस्था में जब भी कोई परिवर्तन होता है तो उससे ग्रामीण आर्थिक जीवन प्रभावित होता है।[4]

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को इसके प्रमुख तत्वों के आधार पर देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि आज भी कृषि ही अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है, जजमानी व्यवस्था में एक बड़ी सीमा तक परिवर्तन हो गया है, परन्तु ग्रामीण अर्थव्यवस्था के एक तत्व के रूप में इसका आज भी महत्व बना हुआ है। ग्रामों में कृषि के अतिरिक्त कुटीर उद्योग–धन्धों का भी महत्व है। कुटीर उद्योगों की प्रकृति स्वतंत्र न होकर एक सहयोगी क्रिया के रूप में ही है। वर्तमान समय में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत परम्परा और आधुनिकता का समन्वय देखने को मिलता है। इससे गाँवों में आर्थिक विभेदीकरण की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिल रहा है। कृषि का व्यापारीकरण भी होने लगा है।

बेरोजगारी

भारत के गाँवों में बेरोजगारी और न्यून सेवा योजना काफी फैला हुआ है। कार्ल प्रिब्राम ने लिखा है कि बेकारी श्रम बाजार की एक दशा है जिसमें श्रम शक्ति की पूर्ति कार्य करने के स्थानों की संख्या से अधिक होती है।[5] भारतवर्ष में बेरोजगारी ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में दिखायी पड़ती है। डॉ0 राधाकमल मुखर्जी के अनुसार उत्तरी भारत के किसान वर्ष में केवल 200 दिन काम करते हैं। 1951 की जनगणना के अनुसार भारत के गाँवों में स्वावलम्बी लोग केवल 29.41 प्रतिशत थे बाकी परावलम्बियों में 11.91 प्रतिशत कमाने वाले थे और 59.00 प्रतिशत बगैर कमाने वाले।

ग्रामीण जनसंख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि हो जाने के फलस्वरूप कृषि पर इसका दबाव निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है और भूस्वामित्व दिन प्रतिदिन कम होता जा रहा है। कृषि योग्य भूमि में उल्लेखनीय वृद्धि न होने के कारण ग्रामीण जीवन में बेकारी बढ़ जाना स्वाभाविक है। ग्रामीण कुमायूँ के अधिकांश कृषक पहले से ही निर्धन थे। प्रत्येक पीढ़ी में उनकी भूमि के अधिक भागों में विभाजित होते रहने के कारण भूमि आर्थिक रूप से लाभप्रद नहीं रह जाती है। सिंचाई के अच्छे साधन उपलब्ध न होने तथा प्राकृतिक वर्षा पर ही निर्भर होने के कारण भी उत्पादन कम होता है। देश के अन्य भागों की अपेक्षा अधिक मेहनत करने पर भी कुमायूँ के ग्रामीण अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण कृषि उत्पादन को नहीं बढ़ा पा रहे हैं। कुटीर उद्योगों की कमी के कारण ग्रामीणों के सामने कोई ऐसा विकल्प भी नहीं है जिससे वे अपनी आय को अतिरिक्त श्रम द्वारा बढ़ा सकें। उन्नत कृषि, बीजों, खादों और कृषि उपकरणों के अभाव में प्रति व्यक्ति कृषि उत्पादन कम होने के कारण भी बहुत से कृषकों को बेकारी का सामना करना पड़ता है।

ग्रामीण कुमायूँ में अधिकाधिक जनसंख्या कृषि ही आश्रित है। भूमि की बनावट, उत्पादकता कम होने के कारण तथा सिंचाई की सुविधायें पर्याप्त न होने के फलस्वरूप कृषि उत्पादन कम है। परिणामस्वरूप कुमायूँनी ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति सामान्य ही है। कृषि कार्यों में वैज्ञानिक प्रविधियों एवं रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग बहुत कम है। कृषि कार्य अधिकांशतः अकेले अथवा अपने परिवार के ही सदस्यों के साथ किया जाता है। अधिकांश कृषकों पर पाँच नाली से कम जमीन है। अधिकतर कृषि हल–बैल द्वारा की जाती है, क्योंकि खेतों की बनावट ऐसी है कि उनमें ट्रैक्टर चलाना सम्भव नहीं हो पाता। केवल कुमायूँ के तराई क्षेत्रों में ही बड़े–बड़े जोत हैं जहाँ पर कृषि हेतु आधुनिक प्रविधियाँ काम में आ रही हैं, परन्तु ग्रामीण कुमायूँ में ऐसा तराई का क्षेत्रफल कम है। अल्मोड़ा, पिथौरागढ़, बागेश्वर, चम्पावत एवं नैनीताल जिलों में भूमि सीढ़ीनुमा ही है केवल ऊधमसिंह नगर जिले के ही क्षेत्रों की भूमि बड़े–बड़े जोतों के रूप में है। कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग बहुत ज्यादा विकसित नहीं हैं। इसके कारण बेरोजगारों की संख्या अधिक है। यद्यपि विगत वर्षों में पूरे कुमायूँ क्षेत्र में भारत सरकार ने अनेक भारी एवं कुटीर उद्योगों को विकसित किया है, परन्तु ये उद्योग वर्तमान समय तक अपनी पूरी क्षमता से उत्पादन प्रारम्भ नहीं कर सके हैं जिससे कि ग्रामीण कुमायूँ के अधिकाधिक व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध करा सकें।

References

1. Smith TL. The Sociology of Rural Life, Harper New York; c1953. p. 18
2. Andre, Beteille. Studies in Agrarian Social Struecture Oxford University, Press, New Delhi; c1974. p. 78.
3. दुबे, एस0सी0 एक भारतीय ग्राम (अनु0 योगेश अटल), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्लीय ब1975. पृ0. 74.
4. Neel WC. Economic Change in Rural India, Land Tenure and Reforme in Uttar Pradesh (1800-1855), London and New Howel University, Press; c1962. p. 36.
5. Karl, Pribram Encyclopaedia of Social Sciences, XV, p. 147.